असन्तुलित आर्थिक विकास एवं कृषि

डॉ. सुरेन्द्र यादव

पृष्ठभूमि एवं परिचय

शहरी चकाचौंध के बीच एक ऐसा भारत भी रहता है जहॉ जीवन के लिए आवश्यक आधारभूत सुविधाओं का नितान्त अभाव है। यह अभाव और इस अभाव के प्रति असंतोष शहरी क्षेत्र के त्रीव आर्थिक विकास के साथ अत्यन्त गहरा होता जा रहा है। ग्रामीण क्षेत्र में अभाव की यह स्थिति ऐसा नहीं है कि पहले नहीं थी परन्तु यह अभाव इतना व्यापक पहले कभी नहीं रहा। शहरी और ग्रामीण क्षेत्रकों में सदैव एक सन्तुलन बना रहा। एक का विकास दुसरे को आगे बढ़ाता तथा दुसरे का पतन पहले को पीछे करता। दोनों क्षेत्रक एक दुसरे के लिए उत्पादक और उपभोक्ता का कार्य करते आ रहे थे। ट्रिकल डाउन सिद्धान्त के आधार पर हर्ष मैन की जिस असन्तुलित आर्थिक विकास की अवधारणा को अपनाया गया सम्भवतः वह भारतीय अर्थव्यवस्था में कारगर नहीं हो सकी।

यद्यपि तत्कालीन आर्थिक परिदृष्य इतना सुनहरा नही था कि प्रत्येक क्षेत्र में त्वरण उत्पन करने योग्य निवेश जुटाये जा सकें। 1950–51 में सकल स्थिर पुंजी नियोजन जी.डी.पी. का मात्र 8.9 प्रतिशत ही था। अल्प मात्रा में उपलब्ध निवेश तथा नव स्वतन्त्र राष्ट्र के समक्ष उपस्थित अखण्डता की समस्या ने ही शायद नीति निर्माताओं को वृद्धि केन्द्र अवधारणा को अपनाने को बाध्य किया। नीति निर्माताओं का विचार था कि ये वृद्धि केन्द्र जल्द ही भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में इंजन के रूप में तब्दील हो जाऐगे। परन्तु ऐसा न हो सका, ये ग्रामीण क्षेत्र को उत्प्रेरित करने में असफल हुये। वृद्धि केन्द्र ग्रामीण और कृषि क्षेत्रकों से निरन्तर दूर होते गये। वृद्धि केन्द्र ग्रामीण अर्थव्यवस्था की अपेक्षा वैश्विक अर्थव्यवस्था से अधिक तीव्रता से जुडते गये। इसी का परिणाम था कि शहरी क्षेत्र रोस्टेव के अनुसार जहॉ टेक ऑफ की अवस्था में आ गये थें वहीं ग्रामीण अर्थतंत्र अभी परम्परागत समाज की अवस्था में ही था।

ग्राम एवं शहर का संक्रमण का समय

त्रीव शहरी विकास की ग्रामीण क्षेत्र पर दोहरी मार पडी दूसरी और शहरी उत्पादों के ग्रामीण क्षेत्र में राशि पतन ने ग्रामीण उद्योगों को नष्ट कर दिया। स्वालम्बी एवं स्वतन्त्र ग्राम शहरों के उपनिवेश बनते गये। ऐसी स्थिति में कृषि ही ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक मात्र साहरा बची परन्तु आगतों के अभाव तथा आधुनिकरण योजनाओं की कमजोरी से यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ आधार प्रदान करने में असफल रही। कृषि क्षेत्र का सर्वाधिक महत्वपूर्ण आगत सिंचाई है, परन्तु योजना काल में सिंचाई सुविधा में कोई उल्लेखनीय सुधार देखने को नहीं मिला।

भारत में सकल सिंचित क्षेत्रफल सकल कृषित क्षेत्रफल का 1960–61 में जहॉ 18.3 प्रतिशत था वह 2000–01 में बढ कर 40.2 प्रतिशत हो गया है, स्पष्ट है कि अभी भी 3/5 कृषि क्षेत्र सिंचाई की सुविधा में वंचित है। परन्तु जो क्षेत्र सिंचित है उस में से भी एक करोड हैक्टेयर कृषि भूमि सिंचाई सुविधा का उपयोग नहीं कर पा रही है। अन्य आगतों की भी कमोवेश यही स्थिति है, उर्वरक जो एक अन्य प्रमुख आगत है भी यही स्थिति दर्शाता है, देश के 28 में से 19 राज्य राष्ट्रीय औसत काफी कम मात्रा में उर्वरकों का उपयोग कर रहे है। वहीं उच्च उत्पादकता वाले बीजों (एच.वाई.वी.) की पहॅूच अभी तक सभी किसानों तक नहीं हो सकी है। कृषि जिस पर भारत के 70 करोड से अधिक लोग आश्रित है कि इस दुर्दशा का मूल कारण पुंजी निवेश का न होना रहा है।

कृषि में सकल पुंजी निर्माण

वर्ष	निवेश			निवेश प्रतिशत		निवेश जी.डी.पी. के प्रतिशत के रूप में
	कुल	सरकारी	निजी	सरकारी	निजी	
1990–91(93–94 के मूल्य पर)	14836	4395	10441	29.60	70.40	1.92
2000–01(99–00 के मूल्य पर)	38735	7155	31580	18.50	81.50	1.90
2001–02	47045	8746	38297	18.60	81.40	2.20
2002–03	46823	7962	38861	17.00	83.00	2.10
2003–04	45132	9376	35756	20.80	79.20	1.90
2004–05	48576	10267	38309	21.10	78.90	1.90
2005–06	54539	13219	41320	24.20	75.80	1.90
' स्त्रोत – आर्थिक समीक्षा भारत सरकार						

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सकल घरेलु उत्पाद के अनुपात के रूप में पिछले 17 वर्षो में कृषि क्षेत्र में होने वाले निवेश में कोई परविर्तन नहीं हुआ है। सन 1990–91 में यह जी.डी.पी. का 1.92 प्रतिशत था। वह अब 2005–06 में 1.90 प्रतिशत रह गया है। सरकार द्वारा यद्यपि निरपेक्ष रूप से निवेश में तीन गुणा वृद्धि हुई है। परन्तु प्रतिशत के रूप में सरकार का हिस्स आलोच्य अवधि में 5 प्रतिशत घट गया है। आपेक्षित पूँजी निर्माण न होने का सीधा प्रभाव इस क्षेत्र की विकास दर पर पडा है।

सारणी–2

.डी.पी. विकास दरें (प्रतिशत में) 1999–2000 के मूल्यों पर कृषि तथा अन्य क्षेत्रों की औसत जी				
अवधि	सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था	कृषि तथा सम्बद्ध गतिविधियॉ	फसल व पशुधन	गैर कृषि
हरित क्रान्ति से पूर्व 1951–52 से 1967–68	3.7	2.5	2.7	4.9
हरित क्रान्ति अवधि 1968–69 से 1980–81	3.5	2.4	2.7	4.4

व्यापक औद्योगिक प्रसार अवधि 1981–82 से 1990–91	5.4	3.5	3.7	6.4
सुधार की प्रारम्भिक अवधि 1991–92 से 1996–97	5.7	3.7	3.7	6.6
नोवीं, दसवी, योजना 1997–98 से 2006–07	6.6	2.5	2.5	7.9
नोवीं, दसवीं योजना 2005–06 से 2006–07	9.5	4.8	5.0	10.7
स्त्रोंत आर्थिक समीक्षा भारत सरकार				

वास्तविक सकल घरेलु उत्पाद वृद्धि दरें उत्पादन लागत के आधार पर (1999–00 के मूल्य पर)

सारणी–3

वर्ष	प्राथमिक क्षेत्र	विनिर्माण	व्यापार, होटल, परिवहन, संचार	वित्त पोषण,बीमा स्थावर सम्पदा कारोबारी सेवाएं	लोक प्रशासन रक्षा, अन्य सेवाएं	जी.डी.पी. एफ.सी.
2000–01	0.0	6.8	7.3	4.1	4.7	4.4
2001–02	5.9	2.8	9.2	7.3	4.1	5.8
2002–03	–5.9	6.9	9.4	8.0	3.9	3.8
2003–04	9.3	7.8	12.0	5.6	5.4	8.5
2004–05	0.7	10.5	10.7	8.7	6.9	7.5
2005–06	5.8	10.6	11.5	11.4	7.2	9.4
2006–07	4.0	11.5	11.8	13.9	6.9	9.6
स्त्रोंत आर्थिक समीक्षा भारत सरकार						

सारणी–2 से स्पष्ट है कि विनिर्माण तथा सेवा क्षेत्र कृषि क्षेत्र की अपेक्षा सम्पूर्ण योजना अवधि में 2 से 2.5 गुणा अधिक तेजी से वृद्धि कर रहा था। सारणी–3 में कृषि क्षेत्र की और भी खराब स्थिति दिखाई दे रही है। वहीं सम्पूर्ण योजनाकाल में 17 वर्ष ऐसे रहे है जब कृषि क्षेत्र की विकास दर ऋणात्मक रही है।

असंतुलित आर्थिक विकास एवं प्रभाव :–

लम्बे समय से हो रहे इस असन्तुलित विकास ने शहरों एवं गांवों के लोगो के जीवन स्तर के मध्य चौडी खाई का निर्माण कर दिया हैं। शहरी व ग्रामीण उपभोग प्रवृति निरन्त विषम होती जा रही है। शहरी ग्रामीण प्रति व्यक्ति उपभोग अनुपात जो 1993–94 में 1.62, वर्ष 1999–2000 में 1.76 तथा वर्ष 2004–05 में 1.91 हो गया है। यह विषमता जीनी अनुपात से और भी आर्थिक स्पष्ट हो कर सामने आती है। जीनी अनुपात के अनुसार देश के सर्वाधिक निर्धन 20 प्रतिशत लोग जहां जी.डी.पी. का मात्र 8.9 प्रतिशत उपभोग कर रहे थे वहां सर्वाधिक समृद्ध 20 प्रतिशत जी.डी.पी. का 41.6 प्रतिशत उपभोग कर रहे थे।

तेजी से बढती इस विषमता ने ग्रामीणों पर अत्याधिक कुप्रभाव डाले है। युवा ग्रामीण आज कृषि कार्यो को बडी ही देय दृष्टि से देखते है तथा अपने पिछडेपन का करण कृषि को ही मानने लगे है। ग्रामीण क्षेत्रों की सामाजिक, संस्कृतिक समरसता का धिरे–धिरे पतन होता जा रहा है। जिसने गांवों में अनैतिकता एवं अपराधों में बढोत्तरी की है। आय एवं रोजगार के साधनों की अनुपलब्धा ने ग्रामीणों को एक नई समस्या में डाल दिया है, ग्रामीण ऋणों के दुष्चक्र में फसते जा रहे है तथा इस दुष्चक्र को न तोड पाने पर आत्महत्या जैसे विकल्पों का प्रयोग तेजी से बढता जा रहा है।

सारांश :–

चूंकि भारत की 70 करोड़ से अधिक जनसंख्या कृषि पर आश्रित है, अतः भारत का विकास कृषि क्षेत्र के विकास के बिना सम्भव नहीं है। ग्रामीण भारत की निर्धनता के दुष्चक्र को तोडने के लिए आज व्यापक मात्रा में निवेश की आवश्यकता है, साथ ही उपजाऊ भूमि पर आवास अथवा उद्योग स्थापित करने की प्रवृति को हतोत्साहित करना होगा। जहॉ तक सरकार की भूमि का प्रश्न है तो सरकार को चाहिए कि वह अपने अधिकतम प्रयास कृषिगत आगतों की निर्बाध आपूर्ति सुनिश्चित करने हेतु करें। भूमि सुधारो के लिए हमें एक बार फिर से देशव्यापी आन्दोलन चलाना होगा। सिलिंग संबंधि कानूनों को कडाई से लागू करते हुए भूमिहीन कृषकों को भूमि उपलब्ध करवानी होगी। सबसे महत्वपूर्ण कदम जो हमें उठाना होगा वहा यह है कि नव धनाड्यों द्वारा कृषि भूमि पर फार्म हाउस बनाने की प्रवृति को रोकना होगा क्योंकि यह प्रवृति गरीब किसान को नव सामंतवाद की ओर ले जाने वाली प्रवृति है।

व्याख्याता, एस एस जैन सुबोध पी जी महाविद्यालय

संदर्भिका

1. आर्थिक समीक्षा, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार , 1994 – 95, 1998 – 99, 1999 – 00, 2000 – 01, 2001 – 02, 2002 – 03, 2003 – 04, 2004 – 05, 2005 – 06, 2006–07
2. आर्थिक समीक्षा, वित्त विभाग राजस्थान सरकार , 1994 – 95, 1998 – 99, 1999 – 00, 2000 – 01, 2001 – 02, 2002 – 03, 2003 – 04, 2004 – 05, 2005 – 06, 2006–07
3. Annual Report, Agriculture Ministry , GOI, 1994 – 95, 1998 – 99, 1999 – 00, 2000 – 01, 2001 – 02, 2002 – 03, 2003 – 04, 2004 – 05, 2005 – 06, 2006–07